(2011] 13 (एडीडीएल.) एस.सी.आर. 1054

संतोष कुमारी

बनाम

जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 1660-1662/2011)

सितम्बर 13,2011

[जे.एम. पंचाल और एच. एल. गोखले, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1989 (1933 ए.डी.) (जम्मू और कश्मीर राज्य में लागू होने के अनुसार):

धाराएं 267 से 269- आरोप की रचना- अभिनिर्धारित संहिता के तहत बनाए गए प्रत्येक आरोप में उस अपराध का उल्लेख होना चाहिए जिसके साथ आरोपी पर आरोप लगाया गया है और यदि कानून ने उस अपराध को कोई विशिष्ट नाम दिया है, तो अपराध को केवल उसी नाम से आरोप में वर्णित किया जाना चाहिए- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973।

जमानत- अंतरिम जमानत- रणबीर दंड संहिता के अपराध धाराएं 302,109,147,148,149 के लिए आरोपित आरोपी- निचली अदालत ने आरोप तय किया जिसमें दंगों के अपराध के समय, स्थान, तिथि और उस स्थान के बारे में विवरण शामिल थे जहां मृतक ने अपनी चोटों के कारण दम तोड़ दिया- उच्च न्यायालय ने अभियुक्त के खिलाफ आरोप तय करने वाले निचली अदालत के आदेश को यह कहते हुए दरकिनार कर दिया कि आरोप में कानून की धाराओं का केवल उल्लेख करने से अभियुक्त के मुकदमे में पूर्वाग्रह होने की संभावना है और वह सही आरोप का पता लगाने में अक्षम हो जाएगा जिसका उसे सामना करना पड़ा और मामले को धाराएं 267 से धारा 269 के संदर्भ में विचार करने के लिए निचली अदालत को भेज दिया और अभियुक्त 'एस' को छोड़कर सभी अभियुक्तों को रिहा करने का भी निर्देश दिया- अपील पर कहा गयाः उच्च न्यायालय का आदेश गलत था - आरोप की प्रकृति को प्रत्येक आरोपी द्वारा स्पष्ट रूप से समझा गया था अभियुक्त की ओर से चश्मदीद गवाहों से जिरह ने संकेत दिया कि वास्तव में किसी भी अभियुक्त को गुमराह नहीं किया गया था जो त्रुटि उच्च न्यायालय द्वारा इंगित की गई- आरोप के बिंदु पर नए सिरे से विचार करने

के लिए मामले को निचली अदालत में भेजने की आवश्यकता बिल्कुल भी नहीं थी, क्योंकि दूर से भी यह सुझाव देने के लिए कुछ भी नहीं था कि आरोपी आरोप में किसी त्रुटि या चूक से गुमराह हुआ था या होगा- अभियुक्त 'एस' को छोड़कर अभियुक्त को ₹.25,000/- प्रत्येक की अंतरिम जमानत पर स्वीकार करने का आदेश निचली अदालत की संतुष्टि के लिए अभियोग के प्रश्न पर अभियोजन मामले के नए सिरे से विचार लंबित है, वारंट नहीं था और न ही बिल्कुल उचित था- यह तथ्य कि अभियुक्त हत्या में शामिल थे, जिसमें मृत्यु या आजीवन कारावास शामिल है, उन्हें अंतरिम जमानत पर रिहा करने से पहले विचार में लिया जाना चाहिए था- निचली अदालत ने अपराध की गंभीरता पर विचार करने के बाद और अभियोजन पक्ष की ओर से आशंका कि अभियुक्त जमानत पर रिहा होने की स्थिति में सबूतों के साथ छेड़छाड़ करेगा, ने जमानत पर अभियुक्त को रिहा करने से इनकार कर दिया था- उच्च न्यायालय ने अभियुक्त को जमानत की राहत देते हुए पूरी तरह से अनदेखी की और प्रासंगिक कारकों की अनदेखी की, जो अभियुक्त के खिलाफ भारी थे- इसके अलावा, यह तथ्य कि शिकायतकर्ता और गवाहों में से एक को अदालत परिसर में शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया गया और धमकी दी गई, को उचित महत्व दिया जाना चाहिए- एफ़आईआर आवश्यक जाँच लंबित थी जिसमें अपीलार्थी के बेटे का बयान धारा 164 के तहत दर्ज किया गया था- एफआईआर की सामग्री से संकेत मिलेगा कि आरोपी या तो स्वयं या अपने रिश्तेदारों के माध्यम से सबूतों के साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश करेंगे, जो मामले में अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में होने जा रहा है- परिस्थितियों के तहत, अंतरिम जमानत पर आरोपी की रिहाई को अलग कर दिया गया है- रणबीर दंड संहिता- धाराएं 302,109,147,148,149।

दंड प्रक्रिया संहिता,1973:

उद्देश्य- अभिनिर्धारित: सभी प्रक्रियात्मक कानूनों की तरह, दंड प्रक्रिया संहिता को न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए तैयार किया गया है और न कि केवल तकनीकी से उन्हें निराश करने के लिए-यह इसके कुछ प्रावधानों को महत्वपूर्ण मानता है, लेकिन अन्य नहीं, और बाद वाले का उल्लंघन एक उपचार योग्य अनियमितता है जब तक कि आरोपी को पूर्वाग्रह न हो।

आरोप तय करना- उद्देश्य- अभिनिर्धारित: आरोप का उद्देश्य आरोपी को उस मामले की सूचना देना है जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है और यह अधिकार क्षेत्र को नहीं

छूता है- यदि, इसलिए, उसे अन्य तरीकों से आवश्यक जानकारी दी जाती है और कोई पूर्वाग्रह नहीं है, तो आरोप की रचना अमान्य नहीं है- आरोप में उल्लिखित विवरण के बयान का उद्देश्य आरोपी व्यक्ति को मूल आरोप का पता लगाने में सक्षम बनाना है, उसे साक्ष्य देने से पहले मिलना होगा और इसके लिए तैयार रहना होगा- आरोप में दिए जाने वाले आवश्यक विवरणों की सीमा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है- एक आरोप तैयार करने में, सभी शब्दजाल से बचा जाना चाहिए- हालांकि, एक आरोप अपने दायरे में सटीक होना चाहिए और विशेष रूप से इसके विवरण में- आरोप में कथित अपराध के समय और स्थान के रूप में ऐसे विवरण शामिल होने चाहिए और जिस व्यक्ति के खिलाफ यह किया गया था, वह उस मामले के आरोपी को नोटिस देने के लिए यथोचित रूप से पर्याप्त है जिसके साथ उस पर आरोप लगाया गया है- दंड प्रक्रिया संहिता, 1989 (1933 ए.डी.) (जैसा कि जम्मू और कश्मीर राज्य में लागू होता है)

अभियोजन पक्ष का मामला यह था कि अपीलार्थी- शिकायतकर्ता के पति पर प्रतिवादी संख्या 3 से 8 द्वारा हमला किया गया था। पीड़ित को अस्पताल ले जाया गया जहां 2-3 दिनों के बाद उसकी मौत हो गई। 24 मार्च, 2008 को निचली अदालत ने रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148,149 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए प्रत्येक आरोपी के खिलाफ आरोप तय किए। प्रतिवादी संख्या 3 से 7 ने उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने मामले के अभिलेख मांगे। प्रतिवादी संख्या 8 ने धारा 561-ए, दंड प्रक्रिया संहिता के तहत एक याचिका दायर की। आरोप तय करने वाले निचली अदालत द्वारा पारित आदेश को रद्द करने के लिए। याचिकाओं के लंबित होने के दौरान, उच्च न्यायालय ने मामले के रिकॉर्ड वापस भेज दिए और प्रतिवादी संख्या 3 से 8 तक को निचली अदालत से जमानत लेने के लिए स्वतंत्रता प्रदान की। इस बीच, अभियोजन पक्ष ने घटना के तीन गवाहों से पूछताछ की थी।

उच्च न्यायालय द्वारा प्रदत्त स्वतंत्रता के अनुसरण में, प्रतिवादी संख्या 3 से 8 ने निचली अदालत में जमानत के लिए आवेदन किया। निचली अदालत ने जमानत याचिकाओं को खारिज कर दिया। प्रतिवादी संख्या संख्या 3 से 7 ने उच्च न्यायालय के समक्ष जमानत याचिकाएं दायर कीं। दिनांक 10.8.2010 को, उच्च न्यायालय ने गवाहों के साक्ष्य को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। दिनांक 13.8.2010 को, प्रतिवादी संख्या 3 के भाई ने शारीरिक रूप से हमला किया और अपीलार्थी के बेटे के साथ-साथ अन्य गवाहों को आरोपी के खिलाफ गवाही देने से रोकने के लिए धमकी दी।

प्रतिवादी संख्या 3 से 8 ने उच्च न्यायालय के समक्ष तर्क दिया कि आरोप अमान्य था क्योंकि विचारण न्यायालय के आदेश में एक या दूसरे अभियुक्त द्वारा व्यक्तिगत रूप से या संयुक्त रूप से किए गए विशिष्ट अपराध का कोई उल्लेख नहीं था और न ही आरोप विरचित करने के क्रम में वर्णन के लिए पर्याप्त अपराधों के विशिष्ट नामों के बारे में कोई संकेत था, लेकिन कानून की केवल उन धाराओं का उल्लेख किया गया था जिनके खिलाफ अपराध किए गए थे। दिनांक 20.10.2010 को, उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 3 से 8 के विरुद्ध आरोप विरचित करने वाले विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और मामले को धाराएं267 से 269, दंड प्रक्रिया संहिता के संदर्भ में विचार करने के लिए विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दिया। उक्त आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 3 को छोड़कर सभी अभियुक्त व्यक्तियों को रिहा करने का निर्देश दिया। तत्काल अपीलें उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई थीं।

अपीलों का निपटारा करते हुए, न्यायालय

अभिनिर्धारित: 1. मुकदमा शुरू होने से पहले आरोपी के खिलाफ आरोप तय करने से संबंधित प्रावधान दंड प्रक्रिया संहिता 1989 (1933 ए.डी.) में निहित हैं। जो जम्मू और कश्मीर राज्य पर लागू होता है। कानून की अपेक्षा है कि उक्त संहिता के तहत बनाए गए प्रत्येक आरोप में उस अपराध का उल्लेख होना चाहिए जिसके साथ अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है और यदि अपराध पैदा करने वाली कानून इसे कोई विशिष्ट नाम देती है, तो अपराध को भी आरोप में केवल उसी नाम से वर्णित किया जाना चाहिए। कानून में आगे यह अपेक्षा की गई है कि जिस कानून और कानून की धारा के खिलाफ अपराध किया गया है, उसका आरोप में उल्लेख किया जाना चाहिए। यह आपराधिक कानून का एक मौलिक सिद्धांत है कि अभियुक्त को उसके खिलाफ लगाए गए आरोप की सटीक प्रकृति के बारे में निश्चितता और सटीकता के साथ सूचित किया जाना चाहिए। आरोप में उल्लिखित विवरण के बयान का उद्देश्य अभियुक्त व्यक्ति को मूल आरोप का पता लगाने में सक्षम बनाना है, उसे साक्ष्य देने से पहले उससे मिलना होगा और उसके लिए तैयार रहना होगा। आरोप में दिए जाने वाले आवश्यक विवरणों की सीमा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है। यह एक अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि आरोप तैयार करने में, सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से बचा जाना चाहिए। हालांकि, एक आरोप अपने दायरे में सटीक होना चाहिए और विशेष रूप से इसके विवरण में होना चाहिए। आरोप में कथित अपराध के समय और स्थान के बारे में और जिस व्यक्ति के खिलाफ यह किया गया था, उसके बारे में ऐसे

विवरण शामिल होने चाहिए जो आरोपी को उस मामले की सूचना देने के लिए उचित रूप से पर्याप्त हों, जिसके साथ उस पर आरोप लगाया गया है। कानून की अपेक्षाओं में से एक यह है कि जब मामले की प्रकृति ऐसी है कि आरोप में उल्लिखित विवरण अभियुक्त को उस मामले की पर्याप्त सूचना नहीं देते हैं जिसके साथ उस पर आरोप लगाया गया है, तो आरोप में उस तरीके का विवरण होना चाहिए जिसमें कथित अपराध किया गया था जो उस उद्देश्य के लिए पर्याप्त होगा। यदि 'क' पर एक निश्चित समय और स्थान पर 'ख' की हत्या का आरोप लगाया जाता है, तो आरोप लगाया जाता है। जिस तरह से 'क' ने 'ख' की हत्या की, उसे बताने की आवश्यकता नहीं है। [अनुच्छेद 6) [1067-छ-ज; 1068-क-ड]

2. सभी प्रक्रियात्मक कानूनों की तरह, दंड प्रक्रिया संहिता को न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए तैयार किया गया है न कि केवल तकनीकी कारणों से उन्हें हतोत्साहित करने के लिए। यह अपने कुछ प्रावधानों को महत्वपूर्ण मानता है लेकिन अन्य को नहीं, और बाद वाले का उल्लंघन एक सही होने योग्य अनियमितता है जब तक कि आरोपी को इससे पूर्वाग्रह नहीं होता है। यह आरोप निर्धारण में त्रुटियों को रखता है, या यहां तक कि उपचार योग्य वर्ग में आरोप निर्धारण की कुल अनुपस्थिति को भी रखता है। आरोप का उद्देश्य अभियुक्त को उस मामले की सूचना देना है जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है और यह अधिकार क्षेत्र को नहीं छूता है। यदि, इसलिए, उसे अन्य तरीकों से आवश्यक जानकारी दी जाती है और कोई पूर्वाग्रह नहीं है, तो आरोप की रचना अमान्य नहीं है। कानून के इस भाग का अनिवार्य भाग शब्दों का कोई तकनीकी सूत्र नहीं है, बल्कि वास्तविकता है, क्या मामला अभियुक्त को समझाया गया था और क्या वह समझ गया था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 34,114 और 149 के लिए उस पर क्या मुकदमा चलाया जा रहा था, जो एक सामान्य उद्देश्य या एक सामान्य इरादे से प्रेरित वास्तविक प्रतिभागियों, सहायकों और पुरुषों के संबंध में विभिन्न कोणों से देखे जाने वाले आपराधिक दायित्व के लिए प्रदान करता है। [अनुच्छेद 7] [1068-च -ज; 1069-क-ग]

विली स्लेवी बनाम मध्य प्रदेश राज्य 1955 (2) एससीआर 140- अनुसरण।

3. दिनांक 24 मार्च, 2008 के आदेश को निष्पक्ष और उचित रूप से पढ़ने से यह स्पष्ट हो गया कि अभियुक्त 'आरएस' ने 28 जून, 2007 को सनूरा में लगभग 9.30 बजे अन्य अभियुक्तों के साथ आपराधिक इरादे से लाठी (लाठियों) से लैस एक समान उद्देश्य के साथ दंगे किए। इस प्रकार, आरोप में दंगे के अपराध के समय, स्थान और तिथि के बारे में

विवरण शामिल थे। कानून जो अपराध बनाता है, इसे विशिष्ट नाम देता है, जो, "दंगा" और इसलिए, अपराध को उस नाम से आरोप में वर्णित किया गया है, अर्थात्, "दंगा"। आरोप में आगे कहा गया कि दंगे के दौरान आरोपी 'आरएस' और अन्य मृतक 'एसएस' पर इरादे से हमला किया गया और उन्हें गंभीर रूप से घायल कर दिया। इस प्रकार उस व्यक्ति का नाम बताया गया जिसके संदर्भ में गैरकानूनी सभा के सदस्यों द्वारा सामान्य आपराधिक उद्देश्य बनाया गया था। आरोप पत्र में यह भी कहा गया था कि उपचार के दौरान घायल 'एसएस' ने 2 जुलाई, 2007 को जम्मू के मेडिकल कॉलेज में दम तोड़ दिया था। इस प्रकार, जिस तारीख को मृतक ने इस चोट के कारण दम तोड़ दिया और जिस स्थान पर मृतक ने दम तोड़ दिया, उसका सटीक उल्लेख किया गया था। अंत में आरोप में, यह उल्लेख किया गया था कि आरोपी 'आरएस' ने रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148,149 के तहत दंडनीय अपराध किए थे। आरोप तय होने के तुरंत बाद आरोपी 'आरएस' की याचिका दर्ज की गई। उनसे पूछा गया पहला सवाल यह था कि क्या उन्होंने आरोप की सामग्री को समझ लिया था जिसे उन्हें पढ़ा और समझाया गया था। उक्त प्रश्न के उत्तर में अभियुक्त 'आरएस' ने सकारात्मक उत्तर दिया था। रिकॉर्ड से पता चला कि इसके बाद आरोपी 'आरएस' से दो सवाल पूछे गए, जिसके जवाब में उसने दावा किया था कि वह निर्दोष था और मुकदमा चलाने की इच्छा रखता था। यह आरोप में कानून की धाराओं या आरोप तय करने के आदेश का केवल उल्लेख करने का मामला नहीं है। इसलिए, उच्च न्यायालय का यह मत न्यायोचित नहीं था कि आरोप में विधि की धाराओं का मात्र उल्लेख अभियुक्त को उसके विचारण में प्रतिकूल प्रभाव डालने की संभावना थी और वह उस सटीक आरोप को जानने में अक्षम होगा जिसका उसे सामना करना पड़ा था, और न ही उच्च न्यायालय का यह मत उचित था कि विचारण न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIX के उपबंधों के लिए जीवित नहीं था। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश के उस भाग को पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है जिस पर उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के प्रयोजन से भरोसा किया है कि आरोप में विधि की धाराओं या आरोप विरचित करने वाले आदेश का मात्र उल्लेख करने से विधि के प्रयोजन की पूर्ति नहीं होगी। निचली अदालत के आदेश पर एक नज़र डालने से पता चलता है कि आरोप तय करने के स्तर पर अभियुक्त के वकील ने दंड प्रक्रिया संहिता 1989 के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत अभियुक्त को आरोपमुक्त करने का अनुरोध किया था, न केवल अभियुक्त के वकील ने मौखिक दलीलें दी थीं, बल्कि उसने लिखित दलीलें भी प्रस्तुत की थीं और निर्णयों के साथ-साथ पुलिस एच द्वारा दर्ज गवाहों के बयानों का हवाला दिया था और इस बात पर जोर देने के लिए कि अभियुक्त को आरोपमुक्त किया जाना चाहिए, फाइल पर अन्य संबंधित दस्तावेजों पर भरोसा किया था। निचली अदालत का

आदेश, जिसे उच्च न्यायालय ने विवादित फैसले में उद्धृत किया था, आरोप तय करने वाला आदेश बिल्कुल नहीं था। यह एक संक्षिप्त आदेश था जिसमें संकेत दिया गया था कि अभियुक्त के वकील द्वारा बी आरोप तय करने के चरण में अभियुक्त को आरोपमुक्त करने के लिए कोई मामला नहीं बनाया गया था और अभियुक्त पर उन अपराधों के लिए मुकदमा चलाया जाना चाहिए जो प्रत्येक अभियुक्त के खिलाफ अलग-अलग आरोप तय करने के क्रम में उल्लिखित थे। [अनुच्छेद 9,10,11] [1071-ङ-ज; 1072-क-ङ; 1073-ग-च]

4. तथ्यों और मामले ' की परिस्थितियों से पता चला कि अभिलेख के तथ्य पर स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कानून की एक प्रत्यक्ष त्रुटि की गई थी कि आरोप तैयार करने के आदेश में कानून की उन धाराओं का केवल उल्लेख था जो अभियुक्त को उसके मुकदमे में पूर्वाग्रह करने की संभावना थी, क्योंकि अभियुक्त यह जानने के लिए अक्षम होगा कि उसे किस सटीक आरोप का सामना करना पड़ा था। उच्च न्यायालय ने विधि में यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की कि विचारण न्यायालय के लिए अपने आदेश और आरोप-पत्र में उन अपराधों का विवरण देना अनिवार्य था जिनके लिए एक या दूसरे अभियुक्त पर मुकदमा चलाया जाना था क्योंकि सभी आवश्यक विवरण जो विधि द्वारा अपेक्षित रूप से बताए जाने चाहिए, अभियोग तैयार करते समय विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही बताए जा चुके थे। इसके अतिरिक्त यह तथ्य कि अभियुक्त के विरुद्ध विचारण ने विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित एफ घटनाओं के चश्मदीद गवाहों के भौतिक साक्ष्य में पर्याप्त प्रगति की है/की है, इस प्रश्न का विनिश्चय करते समय कि प्रत्येक अभियुक्त के विरुद्ध उचित आरोप तैयार किया गया था या नहीं, इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। प्रत्येक अभियुक्त द्वारा सामना किए जाने वाले आरोप की प्रकृति को स्पष्ट रूप से समझा गया था जो आवश्यक आरोप तैयार करने के बाद निचली अदालत द्वारा दर्ज याचिका से स्पष्ट है कि प्रत्येक अभियुक्त द्वारा आरोप की प्रकृति को बहुत अच्छी तरह से समझा गया था। यह तथ्य पुनरीक्षण याचिका में किए गए कथनों से भी स्पष्ट था, जिसे अभियुक्त द्वारा आदेश तैयार करने के आरोप को चुनौती देते हुए दायर किया गया था। यह तथ्य कि प्रत्येक अभियुक्त द्वारा आरोप को स्पष्ट रूप से समझा गया था, उनकी ओर से उनके वकील द्वारा की गई चश्मदीद गवाहों की जिरह की प्रकृति से भी स्पष्ट था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अभियुक्त की ओर से सभी चश्मदीद गवाहों से पूछताछ की गई और उनसे जिरह की गई, उच्च न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता, 1989 की धारा 225 के प्रावधानों का सहारा लेना चाहिए था जैसा कि जम्मू और कश्मीर राज्य पर लागू होता है। अभियुक्त की ओर से चश्मदीद गवाहों से जिरह करने से यह संकेत मिलता है कि अभियुक्तों

में से कोई भी वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा बताई गई तथाकथित त्रुटि से गुमराह नहीं था और न ही उनमें से किसी द्वारा यह सफलतापूर्वक इंगित किया जा सकता है कि तथाकथित त्रुटि ने उसे न्याय की विफलता का कारण बना दिया है। आरोप के बिंदु पर मामले पर नए सिरे से विचार करने के लिए मामले को निचली अदालत में भेजने की आवश्यकता बिल्कुल भी नहीं थी, क्योंकि यह सुझाव देने या दूर से भी संकेत देने के लिए कुछ भी नहीं है कि आरोपी आरोप में किसी त्रुटि या चूक से गुमराह हुआ था या होता। इसलिए, उच्च न्यायालय के विवादित आदेशों को दरकिनार कर दिया जाता है। [अनुच्छेद 12] [1073-छ-ज; 1074-क-च; 1075-क-ग]

5. अभियुक्त 'स' को छोड़कर अभियुक्त को अभियोग के प्रश्न पर अभियोजन पक्ष के मामले पर नए सिरे से विचार किए जाने तक विचारण न्यायालय की संतुष्टि के लिए प्रत्येक को रुपया 25,000/-की अंतरिम जमानत में स्वीकार करने का आदेश न तो आवश्यक था और न ही न्यायोचित था। अभियुक्त को अंतरिम जमानत देने से पहले उच्च न्यायालय प्रत्यक्षदर्शियों की गवाही को नजरअंदाज करने का जोखिम नहीं उठा सकता था, जिसमें अपीलार्थी की गवाही भी शामिल है, जो मृतक की पत्नी है, केवल इसलिए कि मृतक को केवल एक चोट लगी थी और न ही अभियुक्त को इस विशाल याचिका पर अस्थायी जमानत का लाभ दिया जा सकता था कि वे तीन साल की अवधि में मुकदमे का सामना कर रहे थे। मामले के रिकॉर्ड में कहीं भी यह नहीं दिखाया गया है कि अभियुक्त के खिलाफ मुकदमा चलाने में तथाकथित देरी के लिए अभियोजन पक्ष किसी भी तरह से जिम्मेदार था। यह तथ्य कि अभियुक्त हत्या जैसे जघन्य अपराध में शामिल थे, जिसमें मृत्युदंड या आजीवन कारावास की सजा होती है, अभियुक्त को अंतरिम जमानत पर रिहा करने से पहले विचार में लिया जाना चाहिए था। निचली अदालत ने अपराध की गंभीरता और अभियोजन पक्ष की ओर से इस आशंका पर विचार करने के बाद कि आरोपी जमानत पर रिहा होने की स्थिति में सबूतों के साथ छेड़छाड़ करेंगे, आरोपी को जमानत पर रिहा करने से इनकार कर दिया था। उच्च न्यायालय ने अभियुक्त को जमानत की राहत देते समय उपरोक्त प्रासंगिक कारकों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है और उन पर गौर किया है जो अभियुक्त के खिलाफ भारी हैं। इसके अलावा, शिकायतकर्ता और गवाहों में से एक को अदालत परिसर में शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया गया और धमकी दी गई, इस शिकायत को उचित महत्व देना होगा। एफ़आईआर आवश्यक जाँच लंबित थी जिसमें अपीलार्थी के बेटे का बयान 20 अगस्त, 2010 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत दर्ज किया गया था। एफ़आईआर की सामग्री से संकेत मिलता है कि आरोपी या तो स्वयं या अपने रिश्तेदारों के

माध्यम से सबूतों के साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश करेंगे जो मामले में अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में होने जा रहा है। परिस्थितियों के तहत, अंतरिम जमानत पर अभियुक्त 'एस' को छोड़कर अभियुक्त की रिहाई को दरकिनार किया जाना चाहिए। [अनुच्छेद 13 और 14) [1075-घ-ज; 1076-क-घ]

मामला कानून संदर्भः

1955 (2) एससीआर 140 अनुसरण अनुच्छेद 7

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 1660-1662/2011।

जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय,जम्मू के निर्णय और आदेश दिनांक 20.10.2010 से आपराधिक संशोधन संख्या 29/2008, 561-क दंड प्रक्रिया संहिता संख्या 54/2009 और जमानत आवेदन संख्या 26/2010।

अपीलार्थी की ओर से नितिन सांगरा और हेमंतिका वाही।

प्रतिवादियों के लिए आर. पी. भट्ट, बिमल जड़, विक्रम राठौर, सुनील फर्नांडीस, सुहास जोशी, आस्था शर्मा, यावर मसूदी।

न्यायालय का निर्णय द्वारा दिया गया था।

न्यायमूर्ति जे. एम. पांचाल, 1 अपीलार्थी स्वर्गीय श्री सुरिन्दर सिंह की विधवा है, जिनकी 28 जून, 2007 को लगभग 9:00 बजे हत्या कर दी गई थी। आपराधिक अपील संख्या 1660/2011 को जम्मू में जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय के विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा आपराधिक संशोधन संख्या 29/2008 में दिए गए 20 अक्टूबर, 2010 के निर्णय के विरुद्ध निर्देशित किया गया है, जिसके द्वारा विद्वत अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, कठुआ द्वारा 24 मार्च, 2008 का आदेश पारित किया गया था। प्रतिवादी संख्या 3 से 7 के मामले को अलग रखा जाता है और मामले को दंड प्रक्रिया संहिता, 1989 (1933 ए.डी.) (जैसा कि जम्मू और कश्मीर राज्य में लागू होता है) की धारा 267,268 और 269 के संदर्भ में मामले पर विचार करने के लिए विद्वान न्यायाधीश, सांबा को भेज दिया जाता है। आपराधिक अपील संख्या 1661/2011 जम्मू में जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 561-क दंड प्रक्रिया संहिता में पारित 20 अक्टूबर, 2010 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है। 54/2009 जिसके द्वारा 24 मार्च, 2008 के आदेश को निरस्त करने

की वर्तमान अपील के प्रतिवादी द्वारा की गई प्रार्थना विद्वत अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, कठुआ द्वारा आपराधिक चालान में फाइल संख्या 33/2007 का जिसका शीर्षक राज्य बनाम सुभाष सिंह और अन्य है, रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148 के साथ 149 के तहत अपराधों के लिए उसके खिलाफ आरोप तय करना अनुमत है। आपराधिक अपील संख्या 1662/2011 जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय,जम्मू के विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा जमानत आवेदन संख्या 26/2010 में पारित 20 अक्टूबर, 2010 के निर्णय के विरुद्ध निर्देशित किया गया है, जिसके द्वारा प्रतिवादी संख्या 3 से 7 को उपर्युक्त अपराधों के लिए प्रतिवादियों के खिलाफ मुकदमा लंबित रहने तक अंतरिम जमानत पर रिहा कर दिया गया है। चूंकि तीन अपीलें 20 अक्टूबर, 2010 को उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए सामान्य निर्णय और आदेश से उत्पन्न होती हैं। आपराधिक संशोधन संख्या 29/2008 में जम्मू और कश्मीर, धारा 561-क दंड प्रक्रिया संहिता के तहत दायर याचिका संख्या 54/2009 और 26/2010 की जमानत आवेदन संख्या, इस न्यायालय ने इस सामान्य निर्णय द्वारा उनका निपटान करने का प्रस्ताव किया है

2. अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि प्रतिवादी संख्या 3 से 8 आपराधिक अपील संख्या 1660/2011 दिनांक 29-06-2007 को एक वैध सभा का गठन किया, जिसका सामान्य उद्देश्य सुरिंदर सिंह की हत्या करना था और उक्त सभा के सामान्य उद्देश्य के अभियोजन में, प्रतिवादी संख्या 3 से 8 ने सांबा (जम्मू-कश्मीर) जिले के गांव सनूरा में अपीलार्थी के पति सुरिंदर सिंह पर जानलेवा हमला किया घायल को तुरंत इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया। अपीलार्थी द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर रणबीर दंड संहिता की धारा 307 के साथ पठित 109 के अधीन एफआईआर संख्या 113/2007, उक्त घटना के संबंध में 29 जून, 2007 को हीरानगर पुलिस थाने में दर्ज की गई थी। 2 जुलाई, 2007 को घायल सुरिंदर सिंह ने सैन्य अस्पताल, सतवारी, जम्मू में दम तोड़ दिया और इसलिए, रणबीर दंड संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध जोड़ा गया। अपीलार्थी द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर जाँच शुरू की गई। जाँच के दौरान अपीलार्थी और अन्य गवाहों का बयान दंड प्रक्रिया संहिता 1989 की धारा 164 के तहत दर्ज किया गया था। मृतक के शव को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया है। जांच पूरी होने के बाद जांच एजेंसी ने रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148,149 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए अदालत में आरोप पत्र दायर किया था। चूंकि धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है, इसलिए मामला सुनवाई के लिए सत्र न्यायालय को सौंपा गया था। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने अभियोजन पक्ष को सुनने के बाद और आरोप तय

करने के प्रश्न पर अभियुक्त ने 24 मार्च, 2008 को प्रत्येक अभियुक्त के खिलाफ रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148,149 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए आवश्यक आरोप तय किए।

3. 24 मार्च, 2008 को विचारण न्यायालय द्वारा उपर्युक्त आरोप विरचित किए जाने से व्यथित होकर प्रतिवादी संख्य 3 से 7 ने दांडिक अपील संख्या 1660/2011 में दांडिक पुनरीक्षण संख्या 29/2008 उच्च न्यायालय के समक्ष दायर किया। उच्च न्यायालय ने दिनांक 6 जून, 2008 के आदेश द्वारा नोटिस जारी किया और निचली अदालत से मामले का रिकॉर्ड तलब किया। 20 मार्च, 2009 को प्रतिवादी संख्या 8, जो मूल अभियुक्त संख्या 6 है, ने याचिका संख्या निचली अदालत द्वारा रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148 और 149 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप तय करते हुए 24 मार्च, 2008 के आदेश को रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 561-क के तहत 54/2009 पारित किया गया। उपर्युक्त क्रमांकित याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान, उच्च न्यायालय ने दिनांक 13 अगस्त, 2009 के आदेश द्वारा अभिलेख को विचारण न्यायालय को वापस भेज दिया और प्रतिवादी संख्या 3 से 8 तक निचली अदालत से जमानत लेने के लिए। जब उपरोक्त संख्या में संशोधन और धारा 561-क के तहत दायर याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष निपटान के लिए लंबित थी, तो अभियोजन पक्ष ने घटना के तीन चश्मदीद गवाहों से पूछताछ की। (1) संतोष कुमारी, जो, यहां अपीलार्थी, (2) सुरिष्ठा देवी और (3) शक्ति देवी। यह कहा जा सकता है कि अपीलार्थी और शक्ति देवी ने अभियोजन पक्ष के मामले का पूरा समर्थन किया है।

उच्च न्यायालय द्वारा 13 अगस्त, 2009 के आदेश द्वारा दी गई स्वतंत्रता के अनुसरण में, प्रतिवादी संख्या 3 से 8 ने निचली अदालत में जमानत के लिए आवेदन किया। निचली अदालत ने 19 फरवरी, 2010 के आदेश के माध्यम से आरोपी द्वारा दायर जमानत याचिका को खारिज कर दिया। मामले का रिकॉर्ड इंगित करता है कि आरोपी इकराम को छोड़कर, जो आपराधिक अपील संख्या 1660/2011 में प्रतिवादी संख्या 8 है। अन्य सभी अभियुक्तों ने जमानत आवेदन संख्या 26/2010 में उच्च न्यायालय के समक्ष जमानत का दावा करते हुए दायर किया है। उच्च न्यायालय ने 10 अगस्त, 2010 के आदेश द्वारा अभियुक्त के वकील को निचली अदालत द्वारा दर्ज किए गए गवाहों के बयान दर्ज करने का निर्देश दिया। 13 अगस्त, 2010 को आरोपी सुभाष सिंह के भाई रमन सिंह, जो मुख्य अपील में प्रतिवादी संख्या 3 है, ने अपीलार्थी के बेटे के साथ-साथ कुलजीत सिंह, जो मामले में गवाहों में से एक

है, को कथित तौर पर अदालत परिसर में ही शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया और धमकी दी, ताकि वे मामले में अभियुक्तों के खिलाफ गवाही देने से बच सकें। उन्हें यह भी चेतावनी दी गई थी कि अगर उन्होंने आरोपियों के खिलाफ बयान दिए तो उन्हें मार दिया जाएगा। आरोपी के भाई द्वारा किए गए हमले के कारण, अपीलार्थी के बेटे ने पुलिस स्टेशन सांबा में रणबीर दंड संहिता की धारा 341,195क , 504,506 के तहत एफआईआर संख्या 183/2010 दर्ज की है।

अपीलार्थी के पुत्र का उपर्युक्त एफआईआर कथन धारा 164 दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अभिलिखित किया गया था। 20 अगस्त, 2010 को 8 सितंबर, 2010 और 7 अक्टूबर, 2010 को अभियोजन पक्ष ने दो और चश्मदीद गवाहों, जो, (1) रक्षा देवी और (2) कमलेश देवी की जांच की, जिन्होंने अभियोजन मामले का समर्थन किया था।

4. उच्च न्यायालय ने 20 अक्तूबर, 2010 के आदेश द्वारा प्रतिवादी संख्या 3 से 8 तक और दंड प्रक्रिया संहिता 1989 की धारा 267,268 और 269 के संदर्भ में इस पर विचार करने के लिए मामले को निचली अदालत को भेज दिया है। उक्त आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने अभियुक्त सुभाष को छोड़कर सभी अभियुक्त व्यक्तियों को रिहा करने का निर्देश दिया है, जो मुख्य अपील में प्रतिवादी संख्या 3 है, निचली अदालत द्वारा आरोप तय करने के लिए अभियोजन पक्ष के मामले पर विचार लंबित है। उच्च न्यायालय के 20 अक्टूबर, 2010 के उपर्युक्त आदेश ने तीन तत्काल अपीलों को जन्म दिया है।

5. इस न्यायालय ने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है और अपीलों का हिस्सा बनने वाले दस्तावेजों पर विचार किया है।

6. मुकदमा शुरू होने से पहले आरोपी के खिलाफ आरोप तय करने से संबंधित प्रावधान, दंड प्रक्रिया संहिता 1989 (1933 ए.डी.) में निहित हैं जो जम्मू और कश्मीर राज्य पर लागू होती है। कानून की अपेक्षा है कि उक्त संहिता के तहत बनाए गए प्रत्येक आरोप में उस अपराध का उल्लेख होना चाहिए जिसके साथ अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है और यदि अपराध इंगित करने वाली कानून इसे कोई विशिष्ट नाम देती है, तो अपराध को भी आरोप में केवल उसी नाम से वर्णित किया जाना चाहिए। कानून में आगे यह अपेक्षा की गई है कि जिस कानून और कानून की धारा के खिलाफ अपराध किया गया है, उसका आरोप में उल्लेख किया जाना चाहिए। यह आपराधिक कानून का एक मौलिक सिद्धांत है कि अभियुक्त को उसके खिलाफ लगाए गए आरोप की सटीक प्रकृति के बारे में निश्चितता और सटीकता के

साथ सूचित किया जाना चाहिए। आरोप में उल्लिखित विवरण के बयान का उद्देश्य अभियुक्त व्यक्ति को मूल आरोप का पता लगाने में सक्षम बनाना है, उसे साक्ष्य देने से पहले उससे मिलना होगा और उसके लिए तैयार रहना होगा। आरोप में दिए जाने वाले आवश्यक विवरणों की सीमा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है। यह एक अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि आरोप तैयार करने में, सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से बचा जाना चाहिए। हालांकि, इसे आरोप तय करने को अपने दायरे में सटीक होना चाहिए और इसके विवरण में विशेष होना चाहिए। आरोप में कथित अपराध के समय और स्थान के बारे में और जिस व्यक्ति के खिलाफ यह किया गया था, उसके बारे में ऐसे विवरण शामिल होने चाहिए जो आरोपी को उस मामले की सूचना देने के लिए उचित रूप से पर्याप्त हों, जिसके साथ उस पर आरोप लगाया गया है। कानून की अपेक्षाओं में से एक यह है कि जब मामले की प्रकृति ऐसी है कि आरोप में उल्लिखित विवरण अभियुक्त को उस मामले की पर्याप्त सूचना नहीं देते हैं जिसके साथ उस पर आरोप लगाया गया है, तो आरोप में उस तरीके का विवरण होना चाहिए जिसमें कथित अपराध किया गया था जो उस उद्देश्य के लिए पर्याप्त होगा। यदि 'क' पर किसी दिए गए समय और स्थान पर 'ख' की हत्या का आरोप लगाया जाता है, तो आरोप में यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि 'क' ने किस तरीके से 'ख' की हत्या की।

7. सभी प्रक्रियात्मक कानूनों की तरह, दंड प्रक्रिया संहिता को न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए तैयार किया गया है न कि केवल तकनीकी कारणों से उन्हें हतोत्साहित करने के लिए। यह अपने कुछ प्रावधानों को महत्वपूर्ण मानता है लेकिन अन्य को नहीं, और बाद वाले का उल्लंघन एक ठीक होने योग्य अनियमितता है जब तक कि आरोपी को इससे पूर्वाग्रह नहीं होता है। यह आरोप निर्धारण में त्रुटियों को रखता है, या यहां तक कि उपचार योग्य वर्ग में आरोप निर्धारण की कुल अनुपस्थिति को भी रखता है। यही कारण है कि दंड प्रक्रिया संहिता,1973 में धारा 215 और 464 जैसे प्रावधान हैं।

आरोप का उद्देश्य अभियुक्त को उस मामले की सूचना देना है जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है और यह अधिकार क्षेत्र को नहीं छूता है। यदि, इसलिए, उसे अन्य तरीकों से आवश्यक जानकारी दी जाती है और कोई पूर्वाग्रह नहीं है, तो आरोप की रचना अमान्य नहीं है। कानून के इस भाग का अनिवार्य हिस्सा शब्दों का कोई तकनीकी सूत्र नहीं है, बल्कि वास्तविकता है, क्या मामला आरोपी को समझाया गया था और क्या वह समझ गया था कि उस पर किस लिए मुकदमा चलाया जा रहा था। भारतीय दंड संहिता की धारा 34,114 और

149 वास्तविक प्रतिभागियों, सहायकों और सामान्य उद्देश्य या एक सामान्य इरादे से प्रेरित पुरुषों के संबंध में विभिन्न कोणों से देखे जाने वाले आपराधिक दायित्व का प्रावधान करती है; और जैसा कि विली स्लेनी बनाम मध्य प्रदेश राज्य1955 (2) 1189 पर एससीआ 1140 पृष्ठ 1189, में इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की संविधान पीठ द्वारा समझाया गया है। आरोप- निर्धारण अपने आप मे के पूरी समेटी हुई प्रक्रिया है जिसमें प्रत्यक्ष दायित्व और रचनात्मक दायित्व शामिल है, यह निर्दिष्ट किए बिना कि कौन प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी हैं और जिन्हें रचनात्मक रूप से उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए। उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में, यह प्रश्न कि क्या प्रतिवादी संख्या 3 से 8, के विरुद्ध उचित तरीके से आरोप-निर्धारण किया गया है, को देखना होगा।

8. वर्तमान मामले में, प्रतिवादी संख्या 3 से 8 की ओर से क्या तर्क दिया गया था संख्या उच्च न्यायालय के समक्ष, यह था कि आरोप अमान्य था क्योंकि विचारण न्यायालय के आदेश में एक या दूसरे अभियुक्त द्वारा व्यक्तिगत रूप से या संयुक्त रूप से किए गए विशिष्ट अपराध का कोई उल्लेख नहीं था और न ही आरोप विरचना के क्रम में वर्णन के लिए पर्याप्त अपराधों के विशिष्ट नामों के बारे में कोई संकेत था, लेकिन कानून की केवल उन धाराओं का उल्लेख किया गया था जिनके खिलाफ अपराध किए गए थे। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि आरोप तैयार करने वाले आदेश में कानून की धाराओं का केवल उल्लेख करने से कानून का उद्देश्य पूरा नहीं होगा, क्योंकि यह अभियुक्त के मुकदमे में पूर्वाग्रह पैदा करने की संभावना थी, और यह कि अभियुक्त को यह जानने में अक्षम हो जाएगा कि उसे किस आरोप का सामना करना पड़ा था। उपर्युक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करने के 24 मार्च, 2008 के आदेश को निरस्त कर दिया है और दंड प्रक्रिया संहिता 1989 की धारा 267,268 और 269 के संदर्भ में मामले पर विचार करने के लिए मामले को निचली अदालत को भेज दिया है, जो दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 226,227 और 228 के समान हैं।

9. यह पता लगाने के लिए कि प्रतिवादी के खिलाफ बनाया गया आरोप उचित था या नहीं, इस अदालत ने 24 मार्च, 2008 के आदेश को फिर से पेश करने का प्रस्ताव किया है, जिसमें सनूरा, तहसील हीरानगर के निवासी जगदीश सिंह के बेटे राजेश सिंह के खिलाफ आरोप तय किया गया है, जो इस प्रकार हैः-

"अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, न्यायालय

कठुआ

मैं, विनोद चटर्जी कौल, आपको, राजेश सिंह पुत्र जगदीश सिंह निवासी सनूरा, तहसील हीरानगर को के तहत आरोप निर्धारण करता हूं
:

1. कि दिनांक 28.6.07 को सनूरा में लगभग 9.30 बजे अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ आपराधिक इरादे से, लाठी (लाठियों) से लैस सामान्य आपराधिक वस्तु के साथ दंगे किए गए और उस हमले में मृतक सुरिंदर सिंह की हत्या के इरादे से उस पर हमला किया और उसे गंभीर रूप से घायल कर दिया, जिसके बाद 2 जुलाई 2007 को मेडिकल अस्पताल जम्मू में इलाज के दौरान उसकी मौत हो गई, और इस तरह आपने रणबीर दंड संहिता की धारा 302/109/147/148/149 के तहत और इस अदालत के संज्ञान में दंडनीय अपराध किया।

2. और मैं एतद्द्वारा निर्देश देता हूं कि आप पर उक्त आरोप पर इस न्यायालय में मुकदमा चलाया जाए।

दिनांक 24.3.08 हस्ताक्षर."

"अभियुक्त का बयान दिनांक 24 मार्च 2008
राजेश सिंह पुत्र जगदीश सिंह निवासी सनूरा, तहसील हीरानगर जाति राजपूत, पेशे से कर्मचारी...

प्रश्नः क्या आपने आरोप की सामग्री को समझ लिया है जिसे पढ़ा गया है और आपको समझाया गया है?

जवाबः हां।

प्रश्नः क्या आपने अपराध किया है?

जवाबः नहीं।

प्रश्नः क्या आप कुछ और कहना चाहेंगे?

जवाबः मैं निर्दोष हूं और मामले की सुनवाई चाहता हूं।

हस्ताक्षर"।

यह उल्लेख किया जा सकता है कि 24 मार्च, 2008 के आदेश द्वारा प्रत्येक अभियुक्त के खिलाफ इसी तरह का आरोप तय किया गया है।

24 मार्च, 2008 के उपर्युक्त आदेश को निष्पक्ष और उचित रूप से पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि अभियुक्त राजेश सिंह ने 28 जून, 2007 को सनूरा में लगभग 9.30 बजे आपराधिक इरादे से अन्य अभियुक्तों के साथ लाठी (लाठियों) से लैस एक समान वस्तु के साथ दंगे किए थे। इस प्रकार, आरोप में दंगे के अपराध के समय, स्थान और तिथि के बारे में विवरण शामिल हैं। कानून जो अपराध बनाता है वह इसे विशिष्ट नाम देता है, जो, "दंगा" और इसलिए, अपराध को उस नाम से आरोप में वर्णित किया गया है, अर्थात्, "दंगा"। आरोप में आगे कहा गया है कि दंगों को अंजाम देते समय आरोपी राजेश सिंह और अन्य मृतक सुरिंदर सिंह ने उसकी हत्या करने के इरादे से उस पर हमला किया और उसे गंभीर रूप से घायल कर दिया। इस प्रकार उस व्यक्ति का नाम बताया गया जिसके संदर्भ में गैरकानूनी सभा के सदस्यों द्वारा सामान्य आपराधिक उद्देश्य बनाया गया था। आरोप पत्र में यह भी कहा गया है कि उपचार के दौरान घायल सुरिंदर सिंह ने 2 जुलाई, 2007 को जम्मू के मेडिकल कॉलेज में दम तोड़ दिया था। इस प्रकार जिस तारीख को मृतक ने इस चोट के कारण दम तोड़ दिया और जिस स्थान पर मृतक ने दम तोड़ दिया, उसका सटीक उल्लेख किया गया। अंत में आरोप में यह उल्लेख किया गया कि आरोपी राजेश सिंह ने रणबीर दंड संहिता की धारा 302,109,147,148,149 के तहत दंडनीय अपराध किए थे। आरोप तय होने के तुरंत बाद आरोपी राजेश की याचिका दर्ज की गई। उनसे जो पहला सवाल पूछा गया वह यह था कि क्या उन्होंने आरोप की सामग्री को समझ लिया था जिसे उन्हें पढ़ा और समझाया गया था। उक्त प्रश्न के उत्तर में अभियुक्त राजेश सिंह ने हां में उत्तर दिया था। रिकॉर्ड से पता चलता है कि इसके बाद आरोपी राजेश सिंह से दो सवाल पूछे गए, जिसके जवाब में उसने दावा किया था कि वह निर्दोष था और मुकदमा चलाने की इच्छा रखता था।

10. यह आरोप में कानून की धाराओं या आरोप तय करने के आदेश का केवल उल्लेख करने का मामला नहीं है। इसलिए, उच्च न्यायालय का यह मत न्यायोचित नहीं था कि आरोप में विधि की धाराओं का केवल उल्लेख करने से अभियुक्त के विचारण में प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना थी और न ही उच्च न्यायालय का यह मत न्यायोचित था कि विचारण

न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIX के उपबंधों के अनुरूप नहीं था। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश के उस भाग को पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है जिस पर उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने के प्रयोजन से भरोसा करता है कि आरोप में विधि की धाराओं का मात्र उल्लेख या आरोप विरचित करने वाले आदेश से विधि का प्रयोजन पूरा नहीं होगा। उक्त आदेश इस प्रकार हैः

न्यायाधीश ने कहा, "विद्वत लोक अभियोजक, अभियुक्त के विद्वत वकील और लिखित दलीलों के अलावा दिए गए फैसलों और पुलिस द्वारा दर्ज गवाहों के बयानों और फाइल पर दर्ज अन्य संबंधित दस्तावेजों पर विचार करने पर, मेरी राय है कि यह अनुमान लगाने के लिए उचित आधार हैं कि आरोपी सुभाष सिंह पुत्र कृष्ण सिंह, राजेश सिंह पुत्र जगदीश सिंह, विजय सिंह पुत्र कृष्ण सिंह, रंजीत सिंह पुत्र बलदेव सिंह, राकेश सिंह पुत्र जगदीश सिंह और लकड़म सिंह पुत्र नेतर सिंह जाति राजपूत निवासी सोनूरा तहसील हीरानगर के निवासियों ने प्रथम दृष्टया धारा 302/109/147/148 और 149 रणबीर दंड संहिता के तहत दंडनीय अपराध किए हैं। रणबीर दंड संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है।

आरोपी सुभाष सिंह, राजेश सिंह, विजय सिंह, रंजीत सिंह, राकेश सिंह और ओकराम सिंह के खिलाफ धारा 302/109/147/148 और 149 आरपीसी के तहत आरोप तय किए गए हैं। तैयार किए गए आरोपों की सामग्री को पढ़ा गया है और उन अभियुक्त व्यक्तियों को समझाया गया है जिन्होंने उक्त अनुचरों के सामने दोषी नहीं होने का अनुरोध किया है और मुकदमा चलाने का दावा किया है.... "

11. ऊपर उद्धृत आदेश पर एक नज़र डालने से पता चलता है कि आरोप तय करने के चरण में अभियुक्त के विद्वत वकील ने दंड प्रक्रिया संहिता 1989 के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत अभियुक्त को आरोपमुक्त करने का अनुरोध किया था। अभियुक्त के विद्वान वकील ने न केवल मौखिक दलीलें दी थीं, बल्कि उसने लिखित दलीलें भी प्रस्तुत की थीं और निर्णयों के साथ-साथ पुलिस द्वारा दर्ज किए गए गवाहों के बयानों का भी हवाला दिया था और इस बात पर जोर देने के लिए कि अभियुक्त को आरोपमुक्त किया जाना चाहिए, फाइल पर अन्य संबंधित दस्तावेजों पर भरोसा किया था। निचली अदालत का आदेश, जिसे उच्च न्यायालय ने विवादित फैसले में उद्धृत किया है, आरोप तय करने वाला आदेश बिल्कुल नहीं है। यह एक संक्षिप्त आदेश है जो इंगित करता है कि अभियुक्त के विद्वत वकील द्वारा

आरोप विरचित करने के स्तर पर अभियुक्त को दोषमुक्त करने के लिए कोई मामला नहीं बनाया गया था और अभियुक्त पर उन अपराधों के लिए मुकदमा चलाया जाना चाहिए जो प्रत्येक अभियुक्त के खिलाफ अलग-अलग आरोप विरचित करने के क्रम में उल्लिखित थे।

12. तथ्यों पर और मामले की परिस्थितियों में, इस न्यायालय की राय है कि अभिलेख के तथ्य पर स्पष्ट विधि की एक प्रत्यक्ष त्रुटि उच्च न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचने में की गई थी कि आरोप विरचित करने के आदेश में केवल विधि की उन धाराओं का उल्लेख था जो अभियुक्त को उसके विचारण में प्रतिकूल प्रभाव डालने की संभावना थी, क्योंकि अभियुक्त को यह जानने में अक्षम किया जाएगा कि उसे किस सटीक आरोप का सामना करना पड़ा था। प्रत्येक अभियुक्त के विरुद्ध अलग से बनाए गए आरोप को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय द्वारा अपरिहार्य निष्कर्ष पर पहुँचा जाना यह है कि उच्च न्यायालय ने विधि में यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की कि विचारण न्यायालय के लिए अपने आदेश और आरोप पत्र में उन अपराधों का वर्णन करना अनिवार्य था जिनके लिए एक या दूसरे अभियुक्त पर मुकदमा चलाया जाना था क्योंकि सभी आवश्यक विवरण जो विधि द्वारा अपेक्षित होने चाहिए, आरोप तैयार करते समय विचारण न्यायालय के विद्वत न्यायाधीश द्वारा पहले ही बताए जा चुके थे।

इसके अलावा यह तथ्य कि अभियुक्त के खिलाफ मुकदमे में मैंने काफी प्रगति की है क्योंकि निचली अदालत द्वारा दर्ज की गई घटनाओं के चश्मदीद गवाहों के भौतिक साक्ष्य को इस सवाल का फैसला करते समय नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था कि प्रत्येक अभियुक्त के खिलाफ उचित आरोप तैयार किया गया था या नहीं। प्रत्येक अभियुक्त द्वारा सामना किए जाने वाले आरोप की प्रकृति को स्पष्ट रूप से समझा गया था जो आवश्यक आरोप तैयार करने के बाद निचली अदालत द्वारा दर्ज याचिका से स्पष्ट है कि प्रत्येक अभियुक्त द्वारा आरोप की प्रकृति को बहुत अच्छी तरह से समझा गया था। यह तथ्य पुनरीक्षण याचिका में किए गए अभिकथनों से भी स्पष्ट है जो अभियुक्त द्वारा आदेश तैयार करने के आरोप को चुनौती देते हुए दायर की गई थी। यह तथ्य कि प्रत्येक अभियुक्त द्वारा आरोप को स्पष्ट रूप से समझा गया था, उनकी ओर से उनके विद्वान वकील द्वारा की गई चश्मदीद गवाहों की प्रतिपरीक्षा की प्रकृति से भी स्पष्ट है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अभियुक्त की ओर से सभी चश्मदीद गवाहों से पूछताछ की गई है और उनसे जिरह की गई है, उच्च

न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता, 1989 की धारा 225 के प्रावधानों का सहारा लेना चाहिए था जैसा कि जम्मू और कश्मीर राज्य पर लागू होता है जो निम्नानुसार हैः-

"225। त्रुटियों का प्रभावः- अपराध या आरोप में बताए जाने के लिए अपेक्षित विवरणों को बताने में कोई त्रुटि नहीं, और अपराध या उन विवरणों को बताने में कोई चूक नहीं, मामले के किसी भी स्तर पर सामग्री के रूप में माना जाएगा, जब तक कि आरोपी वास्तव में गलती या चूक से गुमराह नहीं हुआ था, और इसने न्याय की विफलता का कारण बना दिया है।

अभियुक्त की ओर से चश्मदीद गवाहों से जिरह करने से यह संकेत मिलता है कि अभियुक्तों में से कोई भी वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा बताई गई तथाकथित त्रुटि से गुमराह नहीं था और न ही उनमें से किसी द्वारा यह सफलतापूर्वक इंगित किया जा सकता है कि तथाकथित त्रुटि ने उसे न्याय की विफलता का कारण बना दिया है। आरोप के बिंदु पर मामले पर नए सिरे से विचार करने के लिए मामले को निचली अदालत में भेजने की आवश्यकता बिल्कुल भी नहीं थी, क्योंकि यह सुझाव देने या दूर से भी संकेत देने के लिए कुछ भी नहीं है कि आरोपी आरोप में किसी त्रुटि या चूक से गुमराह हुआ था या होता। अतः आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 29/2008 में दिया गया 20 अक्तूबर, 2010 का आदेश अपास्त किया जाना चाहिए। इसी तरह के कारणों से 20 अक्टूबर, 2010 का आदेश उच्च न्यायालय द्वारा धारा 561-क दंड प्रक्रिया संहिता के तहत दायर याचिका में पारित किया गया संख्या 54/2009, प्रतिवादी संख्या 8 द्वारा की गई प्रार्थना को अनुज्ञात करती है। 24 मार्च, 2008 के आदेश को रद्द करने के लिए दरकिनार करना होगा।

13. यह उल्लेख किया जा सकता है कि अभियुक्त सुभाष सिंह को छोड़कर अभियुक्त को रुपया 25,000/-प्रत्येक की अंतरिम जमानत के लिए स्वीकार करने का आदेश अभियोग के प्रश्न पर अभियोजन पक्ष के मामले पर नए सिरे से विचार करने के लिए निचली अदालत की संतुष्टि के लिए, वारंट नहीं था और न ही बिल्कुल उचित था। अभियुक्त को अंतरिम जमानत देने से पहले उच्च न्यायालय प्रत्यक्षदर्शियों की गवाही को नजरअंदाज करने का जोखिम नहीं उठा सकता था, जिसमें अपीलार्थी की गवाही भी शामिल है, जो मृतक की पत्नी है, केवल इसलिए कि मृतक को केवल एक चोट लगी थी और न ही अभियुक्त को इस विशाल याचिका पर अस्थायी जमानत का लाभ दिया जा सकता था कि वे तीन साल की अवधि में मुकदमे का सामना कर रहे थे। मामले के रिकॉर्ड से कहीं भी यह नहीं पता चलता है कि अभियुक्त के खिलाफ मुकदमा चलाने में तथाकथित देरी के लिए अभियोजन पक्ष

किसी भी तरह से जिम्मेदार था। यह तथ्य कि आरोपी एफ हत्या जैसे जघन्य अपराध में शामिल हैं, जिसमें सजा के रूप में मौत या आजीवन कारावास शामिल है, आरोपी को अंतरिम जमानत पर रिहा करने से पहले विचार में लिया जाना चाहिए था। निचली अदालत ने अपराध की गंभीरता और अभियोजन पक्ष की ओर से इस आशंका पर विचार करने के बाद कि आरोपी जमानत पर रिहा होने की स्थिति में सबूतों के साथ छेड़छाड़ करेंगे, आरोपी को जमानत पर बढ़ाने से इनकार कर दिया था। उच्च न्यायालय ने अभियुक्त को जमानत की राहत देते समय उपरोक्त प्रासंगिक कारकों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है और उन पर गौर किया है जो अभियुक्त के खिलाफ भारी हैं। इसके अलावा, विजेंदर सिंह द्वारा दायर की गई शिकायत कि उनके और कुलजीत सिंह, जो वर्तमान मामले में गवाहों में से एक हैं, पर अदालत परिसर में शारीरिक हमला किया गया और उन्हें धमकी दी गई। 13 अगस्त, 2010 को दर्ज प्राथमिकी आवश्यक जांच के लिए लंबित है, जिसमें अपीलार्थी के बेटे विजेंदर सिंह का बयान 20 अगस्त, 2010 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत दर्ज किया गया था। एफ़आईआर की सामग्री से संकेत मिलता है कि आरोपी या तो स्वयं या अपने रिश्तेदारों के माध्यम से सबूतों के साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश करेंगे जो मामले में अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में होने जा रहा है।

14. परिस्थितियों के तहत, इस अदालत की राय है कि आरोपी सुभाष सिंह को छोड़कर आरोपी की अंतरिम जमानत पर रिहाई को दरकिनार किया जाना चाहिए। उपरोक्त चर्चा का शुद्ध परिणाम यह है कि तीनों अपीलों को स्वीकार करना होगा। पूर्वगामी कारणों से तीनों अपीलें सफल होती हैं। जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय,जम्मू द्वारा आपराधिक संशोधन संख्या 29/2008 में दिया गया दिनांक 20 अक्तूबर, 2010 का आदेश इसके द्वारा अपास्त कर दिया गया है। इसी तरह 20 अक्टूबर, 2010 का आदेश उच्च न्यायालय द्वारा धारा 561-क दंड प्रक्रिया संहिता के तहत दायर याचिका में पारित किया गया। 54/2009 संख्या को भी अपास्त कर दिया गया है। दिनांक 20 अक्तूबर, 2010 का आदेश जमानत आवेदन संख्या 26/2010 में पारित किया गया जिसमें आरोपी सुभाष सिंह को छोड़कर अन्य अभियुक्तों को अंतरिम जमानत पर रिहा कर दिया गया था, को भी खारिज कर दिया गया है। आरोपी सुभाष सिंह पहले से ही हिरासत में है। इसलिए, यह निर्देश दिया जाता है कि अन्य अभियुक्तों को तुरंत हिरासत में लिया जाए।

मामले के तथ्यों और विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मुकदमा पहले ही शुरू हो चुका है, निचली अदालत को जल्द से जल्द मुकदमा पूरा करने का निर्देश दिया जाता

है। और अधिमानतः इस न्यायालय से रिट की प्राप्ति की तारीख से 9 महीने के भीतर। उपर्युक्त निर्देशों के अधीन, तीनों अपीलों का निपटारा किया जाता है।

डी.जी. अपीलों का निपटारा किया गया।

यह अनुवाद (पैनल अनुवादक) मदन मोहन प्रिय द्वारा किया गया है।